मासिक पत्र

ब्रह्मदत्त जब काशी के राजा थे, तब बोधिसत्व मगध देश के एक गाँव में, क्षत्रिय परिवार में पैदा हुए। उनका नाम माघ था। उस गाँव में करीब करीब तीस घर थे। गाँववाले एक चबूतरे पर बैठ गाँव की कार्यवाहियों पर चर्चा किया करते। गाँववाले अधिकतर चोर डकैत थे। चोरी, हत्याएँ करते, और फिर सरकारी कर्मचारियों को धूस आदि देकर उनको चुप रखते।

चबूतरे की कोई परवाह न किया करता था। उस पर कूड़ा-कबाड़ पड़ा रहता था। माघ ने यह देख अपने लिये थोड़ी जगह साफ़ की। परन्तु किसी और ने वह जगह जबरदस्ती हड़प ली। माघ ने दूसरी जगह साफ कर ली। उसे भी किसी और ने हथिया ली। इस तरह माघ को धीमे धीमे सारा का सारा चबूतरा साफ़ करना पड़ा। फिर उसने छाया के लिये चबूतरे पर एक छप्पर भी डाला। गाँववालों को इस प्रबन्ध से बड़ा आराम मिला।

माघ के इस कार्य ने गाँव के सब लोगों का ध्यान आकर्षित किया। सब उसको अगुवा बनाकर अम-सेवा में तत्पर हो गये। सबने मिलकर बैठने के लिये एक मन्दिर बनाया। प्यास मिटाने के लिये एक पियाऊ भी खोली। वे माघ की देखादेखी, सदब्यबहार भी करने लगे। चोरी-चकारी छोड़ दी। वे रोज रास्ता साफ़ किया करते। गाड़ियों के रास्ते में पड़े पेड़-पत्ते भी हटाया करते। गढ़े साफ करते, तालाब खोदते। कीचड़ में चलने के लिये ऊँचा रास्ता बनाते। माघ ये सब कार्य करवाता था और वह उनका नेता और प्रथ-प्रदर्शक बन गया।

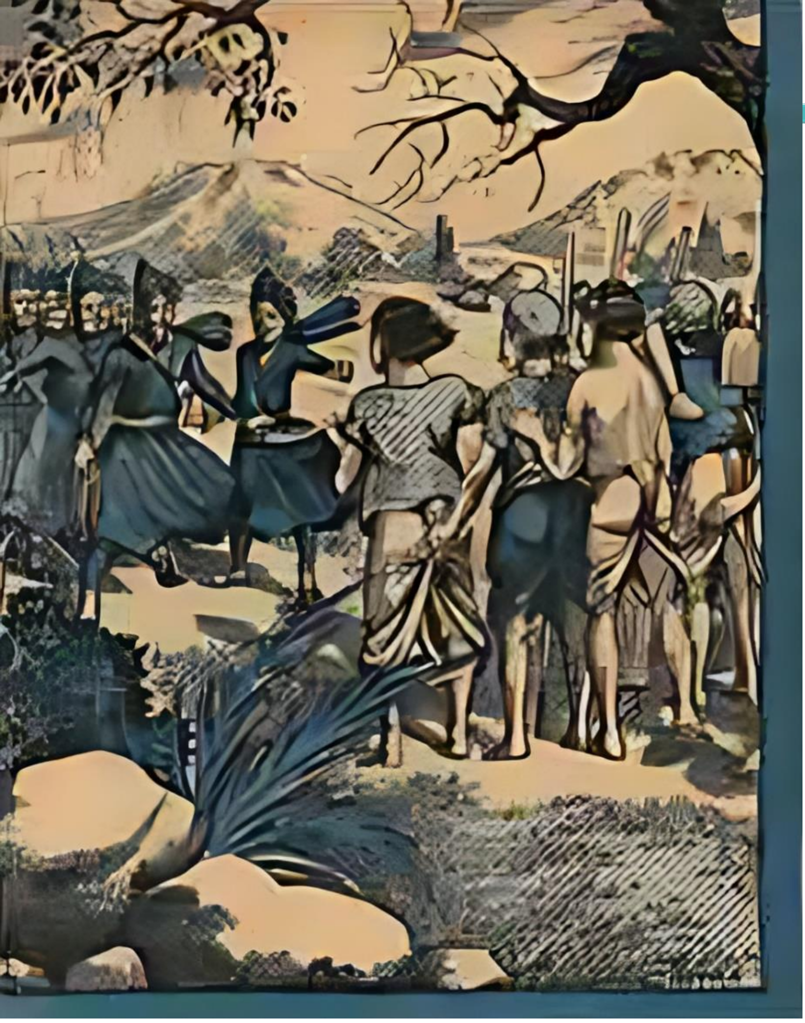

उस गाँव का एक पटवारी भी था। जब गाँव के नौजवान शराब पी पाकर, जुआ खेला करते थे, क़त्ल किया करते थे, चोरी डाके डाला करते थे, वह मौके व मौके उनसे खूब घूस लेकर अच्छा कमाता था। पर जब से गाँववाले माघ की सुनकर, अच्छे व्यवहार में प्रवृत्त हो गये थे तब से पटवारी की आमदनी बहुत घट गई थी। इसलिये पटवारी ने राजा के पास जाकर कहा- "महाराज! हमारे गाँव में अराजकता फैल रही है। माघ नाम के एक लड़के के हुकुम पर गाँववाले बरछे-भाले तरबार-कटार, चाकू-खञ्जर, लेकर इधर उधर खुल्लम-खुल्ला घूम रहे हैं। जिस किसी रास्ते पर जाओ, वे ही दिखाई देते हैं। उनके अत्याचारों से जनता तङ्ग आई हुई है। आपको इस बारे में सूचित करना मेरा कर्तव्य है, बाद में आपकी इच्छा।"

राजा ने पटवारी की फरियाद पर सोच-विचार किया। उसके साथ सौ सिपाहियों को भी भेजा, ताकि अगर पटवारी की शिकायत सच हो तो वे गाँववालों को पकड़कर ला सकें। गाँव में आने से पहले उनको रास्ते में माघ और उसके अनुयायी दिखाई दिये। हर किसी के हाथ में या तो फावड़ा था, नहीं तो कुल्हाड़ा। सैनिकों ने बिना किसी पूछतलब के उनको पकड़ लिया। हाथ-पैर बांधकर, उनको राजा के सामने पेश किया।

राजा, उनके हाथ में फावड़े और कुल्हाड़े देखकर यह न सोच सका कि वे उनका ग्राम सेवा के लिए उपयोग कर रहे थे। उसको पटवारी की शिकायत पर विश्वास हो गया। इसलिये उसने भी उनकी कुछ न सुनी। उसने हुकुम दिया-"इन दुष्टों को हाथियों के पैरों के नीचे दबवाकर मरवा दो।"

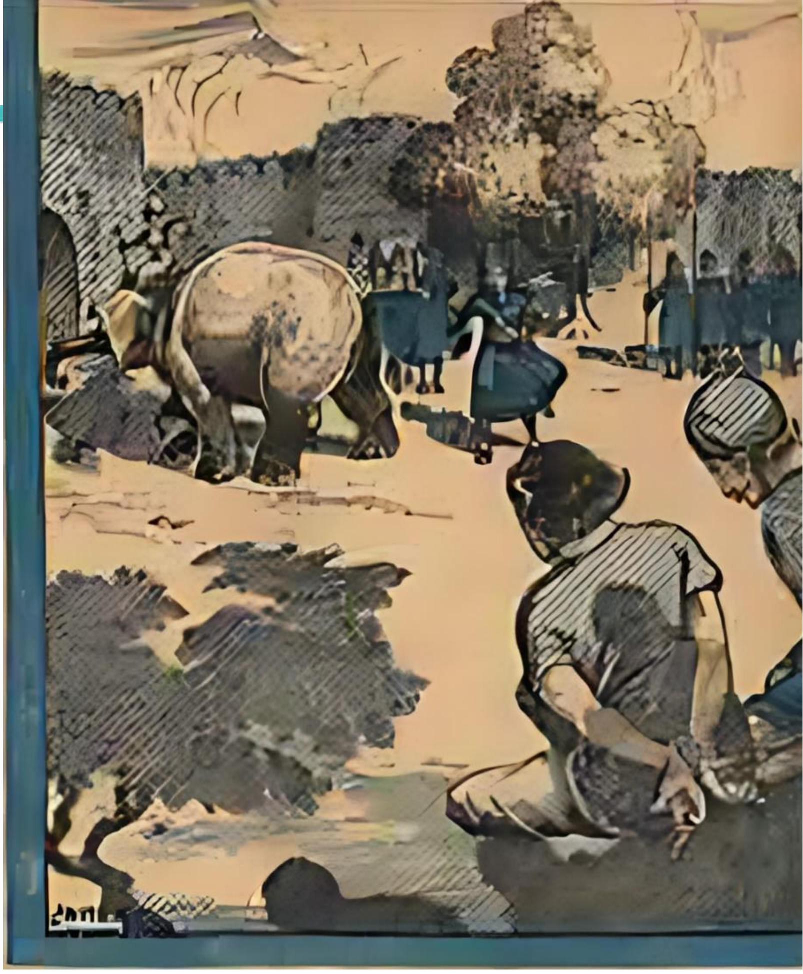

माघ और उसके साथियों को मरवाने के लिए एक बड़े मोटे-ताजे हाथी को लाया गया। वह उनके पास आया, पर उनको देखते ही बिदक कर पीछे भागने लगा। एक और हाथी लाया गया। वह भी भाग गया। यह देखकर सब को बड़ा आश्चर्य हुआ।

यह खबर राजा के पास भी पहुँची। उस मूर्ख राजा ने सैनिकों को आज्ञा दी-"हो सकता है कि इन लोगों ने अपने शरीर पर ताबीज़ औरह, बाँध रखे हो। इसलिये ही हाथी उनके पास नहीं जा रहे हैं। इनकी तलाशी लो। अगर कोई ऐसी चीज हो तो निकाल फेंक दो। और फिर उन्हें मोटे-ताजे हाथियों के पैरों के नीचे दबवाओ।"

परन्तु किसी के शरीर पर कोई छोटा-मोटा ताबीज़ भी न था। यह सुन राजा ने कहा-"अपराधियों को मेरे पास भेजो।" माघ और उनके तीस साथी राजा के सामने हाजिर किये गये।

"हाथी तुम्हें कुचलने के लिए क्यों डर रहे हैं? ऐसा मालूम पड़ता है कि तुमने कोई मन्त्र उनपर फेंका है। क्या यह सच है? क्या तुम कोई मन्त्र-तन्त्र जानते हो?" राजा ने उनसे पूछा।

इस प्रश्न का माघ ने इस प्रकार उत्तर दिया।

"महाराज! आप ठीक कह रहे हैं। हम एक बड़ा मन्त्र जानते हैं। उससे बढ़कर इस संसार में कोई और मन्त्र नहीं है।"

"क्या है वह मन्त्र?" राजा ने उत्कण्ठापूर्वक माघ से पूछा।

"हम में से कोई भी जीव-हिंसा नहीं करता है, कोई भी चोरी नहीं करता है,

बदचलन में नहीं फँसता है। झूठ नहीं बोलता है, न नशीली चीजें ही खाता-पीता है। हम प्राणी मात्र से प्रेम करते हैं। हम दान करते हैं। मार्ग ठीक करते हैं। तालाब खोदते हैं। धर्मशालाएँ बनाते हैं। यह ही हमारा मन्त्र है, यह ही हमारा बल है।" माघ ने कहा।

राजा यह सुन हैरान हो गया। उसने कहा-"ओह! यह क्या? हमने तो सुना था कि तुम राहगीरों पर हमला करते हो, लोगों को सताते हो।"

"आपने जो सुना, उस पर झट विश्वास कर लिया। किसी से कुछ कहा सुना भी नहीं।" माघ ने कहा।

"जब हमारे सिपाहियों ने तुम्हें पकड़ा, तब तुम्हारे हाथ में फावडे, कुल्हाड़े बगैरह थे। इसलिये पूछतलब की कोई ज़रूरत ही न थी।" राजा ने कहा।

"वे ही हमारे साधन हैं। अगर रास्ते में पेड़ बगैरह पड़े हुए हो, तो हम उन्हें कुल्हाड़ियों से काटकर अलग कर देते हैं। तालाब खोदने, रास्ते बनाने, और धर्मशाला बनाने के लिए हम हमेशा अपने पास आवश्यक साधन रखते हैं।" माघ ने कहा।

इसके बाद, राजा ने उनसे पूछतलब करके सच मालूम कर लिया। यह साबित हो गया कि पटवारी का दोषारोपण झूठ था। उसने सालों से जो झूठी कमाई जमा कर रखी थी, उसको राजा ने नवयुवकों को देते हुए कहा-"अब से तुम ही अपने गाँव के मालिक हो। सब काम तुम्ही देख लो। मैं किसी और कर्मचारी को गाँव के शासन के लिए नियुक्त नहीं करूँगा।" राजा ने उस हाथी को भी, जो उन्हें कुचलने के लिए लाया गया था, गाँववालों को भेंट में दे दिया।

चोर मुनि

एक रईस जब परदेश से लौट रहा था तो उसको एक पेड़ के नीचे एक मुनि बैठा हुआ दिखाई दिया। उसको यह न मालूम या कि यह मुनि ढोङ्गी था। रईस ने उसके सामने साष्टाङ्ग करके कहा-"स्वामी! आप हमारे घर कुछ दिन ठहरकर हमें कृतार्थ कीजिये।" मुनि ने उसका निमन्त्रण स्वीकार कर लिया।

रईस ने अपने मकान के आङ्गन में एक कुटीर बनवाई। उसमें पूजा, योगाभ्यास, तपस्या आदि के लिए हर सुविधा का प्रबन्ध किया गया। मुनि को उसी कुटीर में ठहराया गया। मुनि के दिन वहाँ बड़े आराम से गुजरने लगे।

उन दिनों उस इलाके में चोरों का भय बढ़ने लगा। रईस के पास हज़ार मोहरें थीं। उन्हें उसने कुटीर में छुपाना चाहा; क्योंकि अगर चोर आए भी तो वे कुटीर में मुनि के पास न जायेंगे। उनको इसका शक भी न होगा कि कुटीर में मोहरें छुपाई जा सकती हैं।

रईस एक दिन रात को थैली में मोहरें डालकर कुटीर में गया। एक कोने में गढ़ा खोदकर उसने मोहरों की थली दबा दी। फिर उसने मुनि के पास जाकर कहा-"स्वामी! माफ़ कीजिये। आजकल चोरो का बड़ा डर है। इसलिये मुझे अपना धन यहाँ रखना पड़ा है।"

"सब माया है। भ्रम है।" मुनि ने हँसते हुए कहा। रईस मुनि को साष्टाङ्ग प्रणाम कर अपने घर चला गया।

एक महीना बीत गया। एक दिन रात में उस चोर मुनि ने दबी हुई मोहरों की थैली निकाली और मकान के आँगन से बाहर, एक जगह गढ़ा खोदकर उसे दबा दिया।

श्री हरिकृष्ण प्रसाद

अगले दिन वह रईस के घर गया। तब रईस अपने किसी मित्र के साथ बातचीत

कर रहा था। मुनि को देखते ही उसने झुककर प्रणाम किया और पूछा-"स्वामी, कहिये। क्या आज्ञा है?"

" बेटा! हम जा रहे हैं। हमारा काम ही लोक-सञ्चरण है। एक जगह भला कितने दिन ठहरेंगे? हमें तुम्हारे आतिथ्य सेवा पर बहुत सन्तोष है। मगर हमें अब जाना होगा।" चोर मुनि ने कहा।

परन्तु रईस ने उसे और कुछ दिन ठहरने के लिए कहा। मगर मुनि न माना। "बेटा! जाने की आज्ञा हुई है। जाना ही होगा। और हाँ, यह तिनका जाने कहाँ से मेरी झोली में आ गया है। यह तुम्हारा है। तुम ही रखो।" कहते हुए मुनि झोले में से एक तिनका निकालकर सावधानी से उसे रईस के हाथ में रख चला गया।

"कौन है यह चोर बैरागी?" रईस के मित्र ने पूछा।

"अरे भाई! क्यों ऐसा कहते हो? वह किसी दूसरे का तिनका तक नहीं चाहता। अरे क्या यह देखते नहीं हो? मालूम है, मैने उसकी कुटीर में हज़ार मोहरों की थैली छुपा रखी है?" रईस ने कहा।

"मुझे ऐसा लगता है कि वह थैली अब वहाँ नहीं है। अच्छा है, तुरन्त जाकर वहाँ देख लो।" मित्र ने सलाह दी।

रईस ने कुटीर में वह गढ़ा खोदा, वहाँ थैली न थी। दोनों ने घोड़ों पर सवार होकर "मुनि" का पीछा किया। थोड़ी दूर पर उन्हें वह चोर मुनि मिल भी गया। उसके झोले में मोहरों की थैली थी। जब उनकी खूब मरम्मत की गई तो मुनि अपनी चोरी मान गया। बाद में रईस ने उसको न्यायाधिकारी के सामने पेश किया।

[१३]

[नरवाहन के सैनिकों और जङ्गलियों में युद्ध हुआ। जङ्गलियों की हार हुई। नरवाहन के सैनिकों ने किले के खण्डहर पर कब्ज़ा कर किया। शिवदत्त अपने सैनिकों को लेकर समुद्र में भाग निकला। उसे रास्ते में मन्दरदेव मिला। थोड़ी देर बाद कुछ दूरी पर रोशनी दिखाई दी। वे नौकाओं को उस तरफ खेने लगे। उसके बाद-]

घना अधकार था। हाथ को हाथ न दीखता था। शिवदत्त और मन्दरदेव की नौकायें धीमे धीमे एक साथ जिस तरफ से रोशनी जा रही थी, उस तरफ जाने लगी। दो तीन दिन से शिवदत्त और उसके अनुचर समुद्र में घूम रहे थे। न वे सोये थे, न उन्होंने भोजन ही किया था। थके-माँदे थे। शिवदत्त के सैनिक चप्पुओं से चुपचाप नाव खेने लगे।

"शिवदत्त! मैं भूख से मरा जा रहा हूँ। हमारे सैनिकों की भी शायद यही हालत है। जहाँ से रोशनी आ रही है, वहाँ कोई द्वीप होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है। पर देखना यह है कि वहाँ आदमी रह सकते हैं कि नहीं।" मन्दरदेव ने मन्दस्वर में पूछा।

शिवदत्त ने हँसते हुए कहा-"मैं भी यही सोच रहा हूँ। पर मैं यह नहीं सोचता कि इस द्वीप में जैसे जैसे पेट भरकर जीना ही हमारे जीवन का उद्देश्य है। आप पदच्युत मराल द्वीप के महाराजा है। मैं

महासेनानी समरसेन का अनुपायी हूँ। हम दोनों एक ही क्रूर व्यक्ति के बदौलत इस घने अन्धकार में निर्जन प्रदेश में इस तरह मारे मारे फिर रहे हैं, दर दर भटक रहे हैं। कई मुसीबतें झेल रहे हैं।"

मन्दरदेव ने यह सुन कुछ न कहा। उसके मन में यकायक मराल द्वीप, वहाँ की प्रजा, राज्य की घटनायें, आदि बिजली की तरह कौंध उठीं। वह सहसा सहम उठा। वह काँपने लगा।

"शिवदत! आप क्या कहना चाह रहे है, मैं समझ गया हूँ। मैं भयङ्कर से भयङ्कर द्वीप में पैर रखते नहीं घबराता हूँ। जब तक मेरे शरीर में प्राण हैं, तब तक में नरबाहन को न भूलूँगा। में बदला लेकर ही रहूँगा। मैं अपने राज्य का वापिस लेने के लिये भरसक प्रयत्न करूँगा आप इस बारे में बेफिक्र रहे।" मन्दरदेव ने कहा।

मन्दरदेव की बातें सुन शिवदत बहुत सन्तुष्ट हुआ। शिवदत्त जान गया कि नरवाहन के अत्याचार को वह भूला नहीं था। वह कुछ कहने ही जा रहा था कि नाव खेनेवाले सैनिक सहसा जोर से चिल्ला उठे -

"यहाँ बहुत पत्थर हैं। लगता है, इम किसी द्वीप के पास पहुँच गये हैं। इस अन्धेरे में, पत्थरों से बचते हुए नाव खेना बहुत मुश्किल है।"

शिवदत्त ने नौकाओं को रोकने की आज्ञा दी। ध्यान से देखने पर, उनको समुद्र में द्वीप के पेड़ों का झुरमुट साफ नजर आने लगा। इसमें सन्देह न था कि वे किसी द्वीप के समीप पहुँच गये थे। पर किनारे पर पहुँचने के लिये कोई रास्ता न दीख पड़ता था। कितने ही

पहाड़ वहाँ समुद्र की सतह पर मुँह ऊँचा किये ताकते से लगते थे। अगर कहीं लहरों के जोर से कोई नौका उनसे टकरा गई तो बिना चूर चूर हुए नहीं रह सकती थी। वह सचमुच खतरनाक जगह थी।

शिवदत्त ने कहा-"मन्दरदेव! हमारी समुद्र यात्रा खतम हो गई है। आपको शायद सामने हवा में झूमने वाले वृक्ष दिखाई दे रहे हैं। इस अन्धकार में चट्टानों के बीच से नौकाओं को किनारे पर ले जाना आसान काम नहीं है। जान का खतरा है।"

"तो क्या इसका मतलब है कि सवेरे तक यहीं इन्तजार की जाये?" मन्दरदेव ने आश्चर्य से पूछा।

शिवदव ने सिर झुकाकर कहा-"शायद यह ठीक नहीं है। अगर इस द्वीप में कोई बर्बर जाति रह रही हो, तो वे दिन के प्रकाश में हमारा शिकार किये बगैर नहीं रहेंगे। इसलिए अधेरे में ही हमारा वहाँ पहुँचना अच्छा है। द्वीप क्या है और कैसा है, यह सब भी हम इस बीच जान सकेंगे। अगर किसी ने हमारा मुकाबला भी किया तो हम आसानी से भाग भी सकते हैं। यह दिन के प्रकाश में कदाचित सम्भव नहीं।"

मन्दरदेव का भी यही ख्याल था। दोनों नौकाएँ एक चट्टान के साथ बाँध दी गई। किनारे पर पहुँचने के लिये दो तीन फर्लाङ्ग तैरना जरूरी था। क्योंकि किनारा ऊँचा था, इसलिये आसानी से यहाँ पहुँचना असम्भव था। बड़ी बड़ी लहरें भी दूर दूर तक थपथपा रही थीं।

थोड़ी देर तक सलाह-मशवरा करने के बाद, कमर बाँधकर सब समुद्र से कूद पड़े। ऊँची ऊँची लहरें उनको चट्टानों की ओर

चलने लगी। मुश्किल से उनसे बचते बचते जैसे तेसे वे किनारे पर पहुँचे। उन्होंने गीले कपड़े किनारे पर उतार दिये और अच्छे कपड़े, जिन्हें वे पोटली बाँधकर लाये थे, पहन लिए। तब भी सब सरदी के कारण काँप रहे थे। जोर से ठण्डी हवा चल रही थी।

"इस सरदी से बचने के लिये कहीं आग सुलगानी पड़ेगी, ताकि हाथ सेके जा सके। इधर-उधर से कुछ सूखी लकड़ियाँ इकट्ठी करूँ क्या?" एक सैनिक ने शिवदत्त से डरते हुए पूछा।

"अच्छा! इकट्ठी करो। कहीं इस द्वीप में नरभक्षक रहते हो, तो हमारी आग में हमें ही वे भूनकर खा सकते हैं।" शिवदत ने हँसते हँसते कहा।

"हमारे हाथ में तेज चाकू और भाले हैं....." मन्दरदेव कुछ कहना चाहते थे कि शिवदत्त ने बीच में आते हुए कहा-"आपको इन द्वीपों और उनमें रहनेवालों के बारे में अधिक नहीं मालूम है। जङ्गली लोग बड़े निडर होते हैं। भय किस चीज़ का नाम है, वे जानते ही नहीं हैं। आप तलवार से एक का

खातमा कर रहे होंगे कि छः पीछे से आप पर टूट पड़ेंगे। उनका मुकाबला करना बहुत मुश्किल है।"

इतने में कुछ सूखी लकड़ियाँ इकट्ठी कर सैनिकों ने आग सुलगा ली, और उसके चारों ओर बैठकर वे हाथ सेंकने लगे। शिवदत्त उस द्वीप और आनेवाली घटनाओं के बारे में सोचने लगा। मगर मन्दरदेव बेफ्रिक थे। वे सोच रहे थे कि सूर्योदय होने पर द्वीप के बारे में देखा जायेगा। उससे पहले क्यों फिजूल माथापच्ची की जाय।

यकायक एक कुत्ता भौंका और झट रुक गया। शिवदत्त और उसके साथी चौंक उठे और उस तरफ देखने लगे, जिस तरफ से आवाज आई थी। मन्दरदेव ने थोड़ी देर बाद शिवदत्त से यों हिचकिचाते हुए कहा-

"शिवदत्त! लगता है, यह बर्बर जातियों का द्वीप नहीं है। शायद हमारा भय ठीक न था। क्योंकि कुत्तों का पालना सिर्फ सभ्य लोग ही जानते हैं।"

"मन्दरदेव! आप गलती कर रहे हैं।" शिवदत्त ने हँसते हुए कहा-"मैने

स्वयं अपनी आँखों से जङ्गलियों को चीते, शेर पालते देखा है। शायद मैंने आपको इसके बारे में बताया भी था। जिस कुत्ते की हमने आवाज सुनी है, हो सकता है वह जङ्गली कुता हो। पर निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। सवेरा होने पर इस बारे में....."

शिवदत्त अपनी बात पूरी न कर पाए था कि पेड़ों के झुरमुट में से एक पत्थर बाण की तरह आग सेंकते हुए सनिक को लगा। पत्थर लगते ही सैनिक मरता जीता चारों खाने चित गिर पड़ा। सब चौक पड़े। मन्दरदेव ने सुरतः धनुष पर बाण लगाकर जिस दिशा से पत्थर आया था, उस तरफ छोड़ दिया।

फिर एक ऐसी भयङ्कर मनुष्य की-सी आवाज सुनाई पड़ी कि शिवदत्त भी भय से सिहर उठा। सब एक दूसरे का मुख ताकने लगे। वह द्वीप कतई निर्जन न था। कोई क्रूर जाति जरूर वहाँ रह रही थी। यह मनुष्य की-सी आवाज इस बात की साक्षी देता-सा लगता था।

मन्दरदेव तलवार निकलकर आगे बढ़ने लेगे। उन्होंने सैनिकों को पीछे

आने के लिए कहा। पर इतने में शिवदत्त ने उनको मना करते हुए कहा-"मन्दरदेव! आप खतरे से जानबुझकर उलझ रहे हैं। इस अन्धेरे में हम शत्रुओं का पीछा नहीं कर सकते। हम इस द्वीप में नये हैं। हम यह नहीं जानते कि किस पेड़ के पीछे क्या खतरा छुपा हुआ है।"

"भले ही वह पत्थर फेंकनेवाला कोई हो, मैंने उसको अपने बाण से घायल कर दिया है। बाण लगते ही वह बुरी तरह चिल्लाया था न? अगर वह अब भी जिन्दा है, तो हम उससे इस द्वीप के

बारे में जान सकते हैं।" मन्दरदेव ने शिवदत्त से कहा।

पर शिवदत्त ने मन्दरदेव की बात न मानी। "मौजूदा हालत में हम यह नहीं जानते कि आपके बाण की चोट से वह मरा है या चोट खाकर भाग गया है। हम यह भी नहीं जानते कि वह अकेला है या उसके साथ और भी कई हैं। इसलिये सूर्योदय से पहले हमारे लिये यह ही अच्छा है कि हम बहुत होशियारी से रहें। हमारा यहाँ से हिलना अच्छा नहीं है।" उसने कहा।

इस विषय में सब शिवदत्त से सहमत थे। सोनेवाले सो गये। शिवदत्त और एक सैनिक पहरा देने लगे। सूर्योदय होने तक कोई भी उल्लेखनीय घटना उस इलाके में न घटी। सब वातावरण शान्त था। काफी सवेरा होने के बाद, मन्दरदेव और सैनिकों ने आँखें खोलीं। आँखें खोल कर देखते क्या है कि वे एक घने जङ्गल में हैं। आकाश को चूमनेवाले बड़े बड़े वृक्ष और उनकी जड़ के पास उगे हुए छोटे छोटे पेड़ पौधे, घनी बेलें इधर उधर फैली हुई थी और उन पर बन्दर उछल-कूद रहे थे। तरह तरह के पक्षी चह चाहा रहे थे। उस भयानक दृश्य को देखकर भय लगता था।

"मन्दरदेव! अब हम वह काम पूरा कर सकते हैं, जो हमने रात को अधूरा छोड़ दिया था। शायद आप बता सकते हैं कि आप का बाण कितनी दूर जाकर, उस भयङ्कर आवाज वाले मनुष्य को लगा था।" शिवदत्त ने पूछा।

मन्दरदेव आगे आगे चले। पेड़-पौधों, घास पत्तों को चीरते हुर वे बढ़ रहे थे। कोई निश्चित रास्ता न था। वे सब सौ गज गये होंगे कि उन्हें पत्तों पर खून के चिन्ह दिखाई दिये।

(अभी और है)

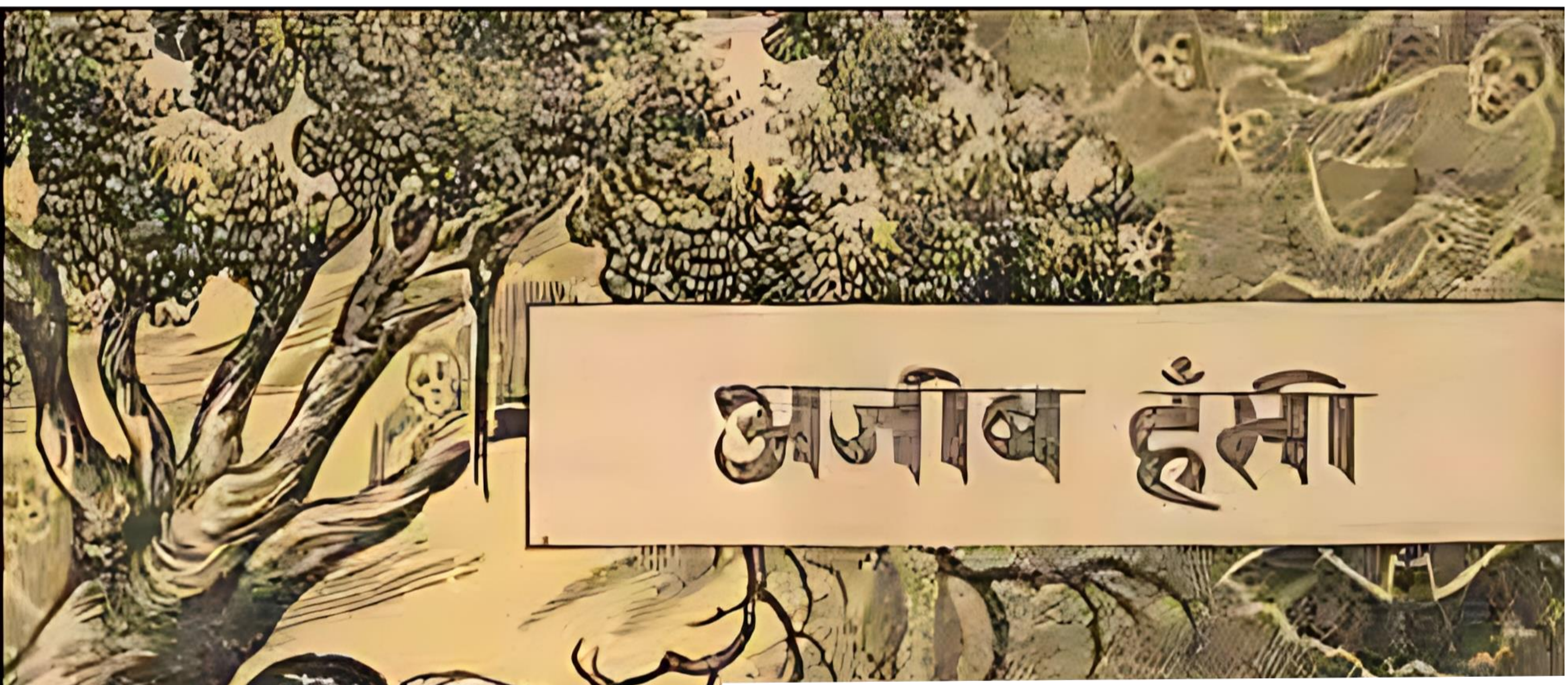

अजीब हँसी

विक्रमार्क अपनी ज़िद का पक्का था। वह फिर पेड़ के पास गया। शव को उतार कर कन्धे पर डाल, वह चुपचाप शमशान की ओर चला। तब शव में स्थित बेताल ने अट्टहास करके कहा-"अरे भाई! राजा होग अपने को आफत से बचाने के लिए दूसरों को बलि देते हैं। दूसरों को आफत से बचाने के लिए कोई अपनी बलि नहीं देता। क्या तुमने चन्द्रावलोक की बात नहीं सुनी है? सुनो में सुनाता हूँ।" उसने यह कहानी सुनानी शुरु की-

पहले किसी जमाने में, चन्द्रावलोक चित्रकूट का राजा था। उसकी प्रजा को उस पर अभिमान था। वह भी प्रजा को मित्र की तरह देखता। सुख से वह अपना समय गुज़ार रहा था। पर उसमें एक ही

बेताल कथाएँ

कमी थी। उसे विवाह के लिए कोई भी उपयुक्त कन्या न मिली। इसलिये वह अविवाहित ही रह गया था। जब कभी उसे अफसोस होता कि उसके पत्नी नहीं है, झट वह शिकार खेलने चला जाता और बहुत समय तक वहीं रहता। शिकार में अपनी चिन्ता भूल जाता।

एक बार राजा शिकार खेलने गया। रास्ते में जो कोई कर जन्तु मिलता, उसे वह मार देता । शिकार खेलता खेलता वह एक घने जङ्गल में घोड़े पर सवार हो पहुँचा। जाते जाते उसको एक पेड़ों का झुरमुट दिखाई दिया। उसके पास एक सोता था। प्यास बुझाकर एक पेड़ के नीचे, वह आराम करने लगा।

इस बीच में जङ्गल में से एक सुन्दर मुनि-कन्या वहाँ स्नान करने के लिए आई। उसको देखते ही राजा बहुत प्रसन्न हुआ। उसने सोचा कि वह उसके उपयुक्त पत्नी बन सकती थी। परन्तु वह कन्या राजा को देख कर शर्मा गई और वापिस चली गई।

राजा उसका पीछा करता करता एक आश्रम में पहुँचा। वह एक मुनि का आश्रम था। वह कन्या उसकी दत्तक पुत्री थी। उसका नाम इन्दीवर प्रभा था। राजा ने मुनि के दर्शन करके बताया कि वह शिकार के लिए आया हुआ था। यह सुन मुनि ने कहा-"बेटा! क्यों अपनी शक्ति शिकार में व्यर्थ गँवाते हो? राज्य का परिपालन करो। अच्छे कामों में प्रवृत्त होओ।"

तब चन्द्रावलोक ने कहा-"ऋषिजी! मैं अभी तक गृहस्थ नहीं बन पाया हूँ। मुझे मेरे अनुरूप कोई कन्या नहीं मिली है। आपके आश्रम में मैंने अभी ही इन्दीवर प्रभा को देखा है। यदि आपने कृपा करके

उसका मेरे साथ विवाह किया तो मैं यह शिकार छोड़ दूँगा और राज्य पालन में ही अपना समय बिता दूँगा।"

मुनि ने इन्दीवर प्रभा की अनुमति लेकर उन दोनों का अपने हाथ से ही विवाह करवाया। विवाह होते ही राजा, पत्नी को लेकर राजधानी की ओर चल पड़ा। उनके थोड़ी दूर जाते ही अन्धेरा हो गया। रात को उन्हें आराम करने के लिए, पीपल का पेड़ मिला। पेड़ के नीचे कालीन की तरह हरी मुलायम घास बिछी हुई थी। पास में एक झील थी, उसमें कमल थे। उस झील का पानी पीकर वे सो गये। सवेरे उनको जोर का शोर सुनाई पड़ा। वे घबराकर उठ खड़े हुए। उनके सामने एक अम राक्षस खड़ा चिल्ला रहा था-"जानते हो, मैं कौन हूँ? मेरा नाम ज्वालामुख है। मुझे देखकर देवी-देवता भी डरते हैं। यह मेरा पीपल का पेड़ है। मेरी गैरहाजिरी में, बिना मेरी इजाजत के तुम इस पेड़ के नीचे क्यों सोये? देखो, मैं तुम्हारा क्या करता हूँ !"

"महाराज! बिना जाने अपराध हुआ है। मुझे क्षमा करो। अगर इस गलती

के लिए कोई प्रायश्चित हो तो मैं करने के लिए तैयार हूँ।" ज्वालामुख से चन्द्रावलोक ने बड़े विनय से कहा।

"अच्छा! तो सात दिन में, सात वर्ष के एक लड़के को मुझे बलि दो। इस बलि के लिए लड़के को स्वयं मानना पड़ेगा। उसका सिर तुम्हें अपने हाथों से काटना होगा। उस समय उसके माँ-बाप को ही, उसके हाथ पैरों को जोर से पकड़ना होगा। कुछ भी अगर इस में भूल-चूक हुई तो मैं नहीं मानूँगा।" ज्वालामुख ने कहा। और कोई रास्ता न था। राजा ने

राक्षस की बात मान ली। पत्नी के साथ घोड़े पर चढ़ वह चल पड़ा। नौकर-चाकरों के साथ बाद में, वह चित्रकूट पहुँचा। राजा ने विवाह कर लिया है, यह सुन मन्त्री खुश तो हुए, पर ज्योंही उन्होंने ज्वालामुख के बारे में सुना, त्योंही वे चिन्ता-सागर में डूब गये। तब महामन्त्री सुमति ने कहा-"महाराजा! आप फिक्र न कीजिये। बलि के लिए जैसे तैसे में एक उपयुक्त बच्चे को ढूँढ़ निकालूँगा।"

उसने तुरन्त सुनारों को बुलवाकर आज्ञा दी कि वे सात वर्ष के लड़के की सोने की मूर्ति तैयार करें। एक मूर्ति तैयार कर दी गई। उसे एक गाड़ी में रखकर मन्त्री ने कुछ सैनिकों से यों कहा:

"तुम इस मूर्ति को गाँव गाँव फिराओ। यह ढिँढोरा पीटो कि सात वर्ष का एक लड़का इच्छापूर्वक ब्रह्मराक्षस की बलि के लिए चाहिये। उसको बलि देते समय उसके माँ-बाप को उसके हाथ-पैर पकड़ने होंगे। जो कोई यह मानेगा, उसको यह सोने की मूर्ति दी जायेगी।"

राज-सैनिक यह घोषणा करते हुए, उस मूर्ति को गाँव गाँव ले जाने लगे। एक

ब्राह्मणों के गाँव में सात वर्ष के एक ब्राह्मण लड़के ने ढिँढोरा सुनकर राज सैनिकों से कहा-"मैं राक्षस के लिए बलि होने को तैयार हूँ। मैं अपने माँ-बाप को भी मना लूँगा। आप हमारे साथ मेरे घर चलिये।" उसने अपने माँ-बाप से कहा कि वे उसको बलि होने के लिए अनुमति दें। इसके लिए वे बिल्कुल न माने। तब लड़के ने कहा-"हम बड़ी गरीबी में जी रहे हैं। आप मेरे कारण क्या आनन्द पा रहे हैं? आज नहीं तो कल मुझे जाना ही होगा। पहले गरीबी तो दूर कर लो। बाद में और सन्तान होगी। उनको देखकर खुश होना। फिर इस तरह का मौका न मिलेगा।" बहुत कहने सुनने पर उसके माँ-बाप भी मान गये। राज-सैनिकों ने सोने की मूर्ति को उसके माँ-बाप को दे दिया। उसको और उसके माँ-बाप को गाड़ी में बिठाकर वे राजा के पास ले गये।

राजा उस लड़के को, उसके माँ-बाप को साथ लेकर, ज्वालामुख के पीपल के पेड़ के पास गया। उसने उसको पुकारा। राक्षस उसकी आवाज सुनकर आया।

"महाराज! आपकी निश्चित की हुई अवधि में आप के लिए बलि ले आया हूँ।" राजा ने कहा।

"तो उसका गला काटो।" ब्रह्मराक्षस ने कहा।

लड़के के माँ-बाप ने उसके हाथ-पैर जोर से पकड़ लिये। उसका गला काटने के लिए राजा ने तलवार उठाई। उस समय वह लड़का हँसा। तुरन्त ब्रह्मराक्षस ने उसे उठाकर चूमा और कहा-"जाओ बेटा! घर जाओ।"

बेताल ने कहानी सुनाकर कहा- "राजा! मरते समय वह लड़का क्यों हँसा था? ब्रह्मराक्षस ने उस लड़के की बलि क्यों नहीं स्वीकार की? क्यों उसने उसे छोड़ दिया? अगर जानबूझ कर तुमने जवाब न दिया तो तुम्हारा सिर फोड़ दूँगा।"

"जब छोटे बच्चों को डर लगता है तो माँ-बाप उन्हें बचाते हैं। हर हालत में मनुष्यों का राजा रक्षक है। जब राजा न रक्षा कर पाये तो कोई अमानुषीय शक्ति ही रक्षा कर सकती है। वह लड़का बिपत्ति में था। उस बिपत्ति में उसके माँ-बाप तो रक्षा नहीं करते, वह तो उसके हाथ-पैर पकड़े हुए थे। राजा भी मदद न करता। क्योंकि वह स्वयं बलि दे रहा था। पास खड़े ब्रह्मराक्षस में एक अमानुषीय शक्ति थी। पर वह बचायेगा नहीं, क्योंकि उसे ही बलि चढ़ाई जा रही थी। तीनों रक्षकों में से उसे एक रक्षक की भी रक्षा न मिल रही थी। इसलिये वह लड़का हँस पड़ा। उसकी हँसी का मतलब समझकर ब्रह्मराक्षस ने उसके प्राणों की रक्षा की।" विक्रमार्क ने कहा। इस प्रकार राजा का मौन भङ्ग होते ही, बेताल शव को लेकर फिर पेड़ पर जा बैठा।

चोर - डाकू

फ़ारस के निशापुर नामक नगर में शम्स नाम का एक नौजवान रहा करता था। उसने परदेश जाकर धन कमाने की सोची। वह एक काफिले के साथ चल पड़ा। काफिला एक रेगिस्तान में पहुँचा।

शम्स कभी किसी काफिले में न गया था। इसलिए वह पड़ाव में खा-पीकर ऊँघने लगा। वह उठा तो सवेरा हो चुका था और काफिला बहुत दूर जा चुका था।

शम्स अकेला रह गया था। उसे कुछ न सूझा कि क्या करे। वह दिन भर बिना कुछ खाये पिये इधर उधर भटकता रहा। उसे एक भी आदमी न दिखाई दिया। अगले दिन, उसे दूर पर ऐसा लगा, जैसे उसकी तरफ कोई चला आ रहा हो।

दुर्भाग्य से, यह आनेवाला रेगिस्तान में रहनेवाले डाकुओं में से एक मशहूर डाकू था। वह बड़ा साहसी और क्रूर था। वह शम्स पर झपटा। उसके हाथ-पैर बाँधकर, उसको रेत में घसीटता घसीटता स्वयं घोड़े पर सवार होकर वह चलता गया। एक तालाब आया। डाकू घोड़े पर से उतरा। तलवार एक तरफ रखकर पानी पीने लगा। शम्स ने तो अपनी जान पर भरोसा पहले ही छोड़ रखा था। इसलिये उसने बँधे हाथों से उसकी तलवार ली और उसी के कोख में भौंक दी। डाकू वहीं ठण्डा हो गया।

शम्स ने उसी तलवार से अपने बन्धन भी काट लिये। मरे हुए डाकू के घोड़े पर सवार होकर वह चल दिया। उसे डर लग रहा था कि जाने क्या क्या मुसीबतें उसे झेलनी पड़ेगी। उसे रेगिस्तान में रास्ता न मालूम था। इसलिए उसने घोड़े की लगाम छोड़ दी और घोड़ा अपने रास्ते पर चलता

श्री मदनमोहन श्रीवास्तव

गया। घोड़ा चलता चलता कई तम्बुओं के पास पहुँचा। तम्बु डाकुओं के थे। उन्हीं डाकुओं के सरदार को शम्स ने मार दिया था। जब डाकुओं ने, दूर से सरदार के घोड़े को आते हुए देखा तो सोचा कि सरदार आ रहा है। पर जब उनको पता लगा कि उनका अनुमान गलत था तो सब ने शम्स को घेरकर पूछा- "कहो क्या हुआ? सरदार कहाँ हैं? उनके घोड़े पर क्यों आये हो? तुम कौन हो?"

शम्स अक्लमन्द था। उसने समझदारी से काम लिया। उसने एक चाल चली।

"भाइयो! मैं एक राहगीर हूँ। जब हमारा काफिला रेगिस्तान में से गुजर रहा था, तो आपके बलवान सरदार ने हम पर अकेला हमला किया और हम में से कई को मार भी दिया। परन्तु अन्त में सैकड़ों आदमियों ने घेरकर उसे पकड़ लिया। हम में से कई ने कहा भी कि उसको छोड़ दो, क्योंकि हम उसकी बहादुरी से बहुत प्रभावित हुए थे। काफिले का सरदार हमारी बात सुनकर कुछ झुका भी। परन्तु जो मारे गये थे, उनके रिश्तेदारों ने ज़िद पकड़ी कि उससे जरूर बदला लेना चाहिए।

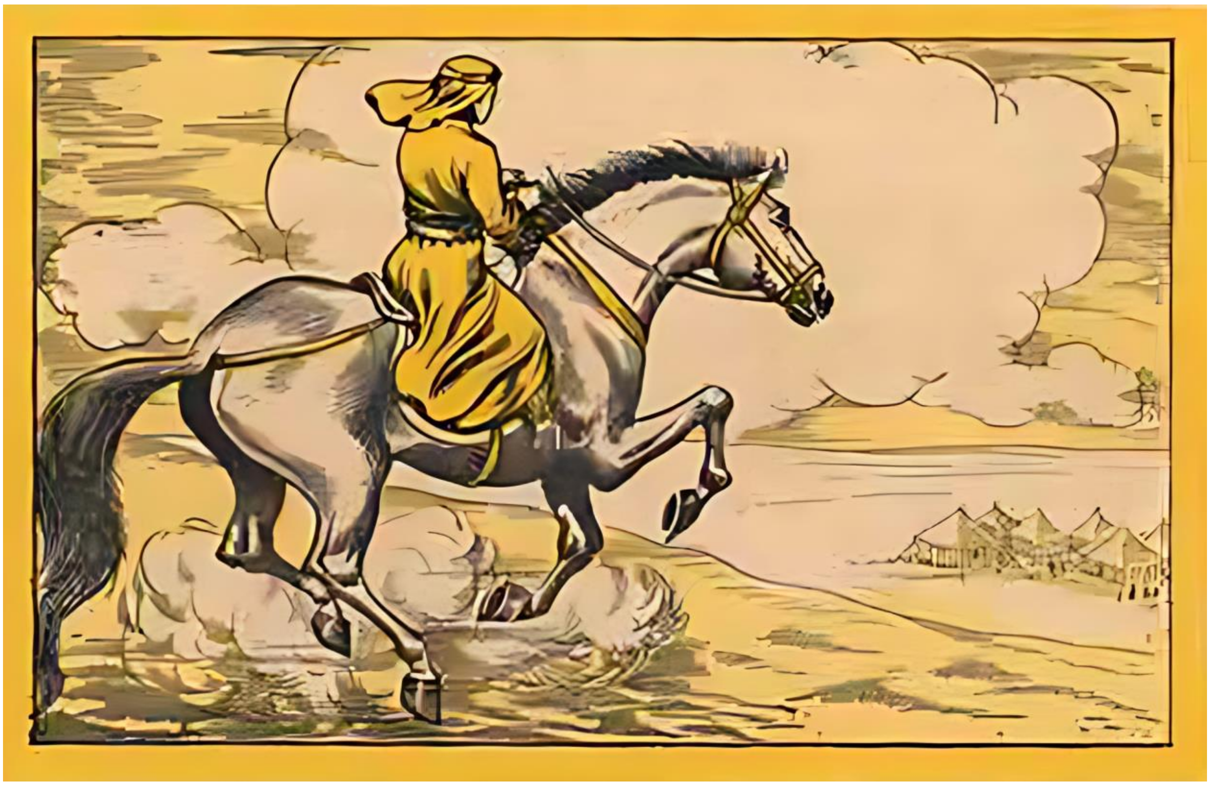

सब हम ने कहा-'अगर तुम बदला लेना चाहते हो, तो क़त्ल के बदले रुपया पैसा वसूल कर लो। परन्तु यह अच्छा नहीं कि इतने बहादुर आदमी को मारा जाये।' यह वे मान गये। उन्होंने कहा कि बशर्ते दस हजार दीनारें उनको दी गयी तो वे उसको छोड़ देंगे। तुम्हारे सरदार ने कहा कि वह दस हजार दीनारें लाकर दे देगा। पर कोई भी यह न माना कि वह अकेला वापिस जाये। जब और को जाने के लिए कहा गया तो वे हिचकिचाने लगे। किसी ने कहा-'थके हुए हैं'। किसी और ने कहा-'रास्ता नहीं मालूम है।' तब तुम्हारे सरदार ने कहा-'चाहते हो तो तुम में से एक मेरे घोड़े पर सवार होकर जा सकता है। वह सीधा हमारे पड़ाव की ओर ही जायेगा।' तब में तैयार हुआ और ठीक उसी तरह यह घोड़ा मुझे यहाँ ले भी आया।" शम्स ने कहा।

डाकू यह न निश्चय कर सके कि इस कहानी पर विश्वास किया जाय कि नहीं। यह देख शम्स ने कहा-"यह जरूरी नहीं है कि मेरी बात पर आप विश्वास

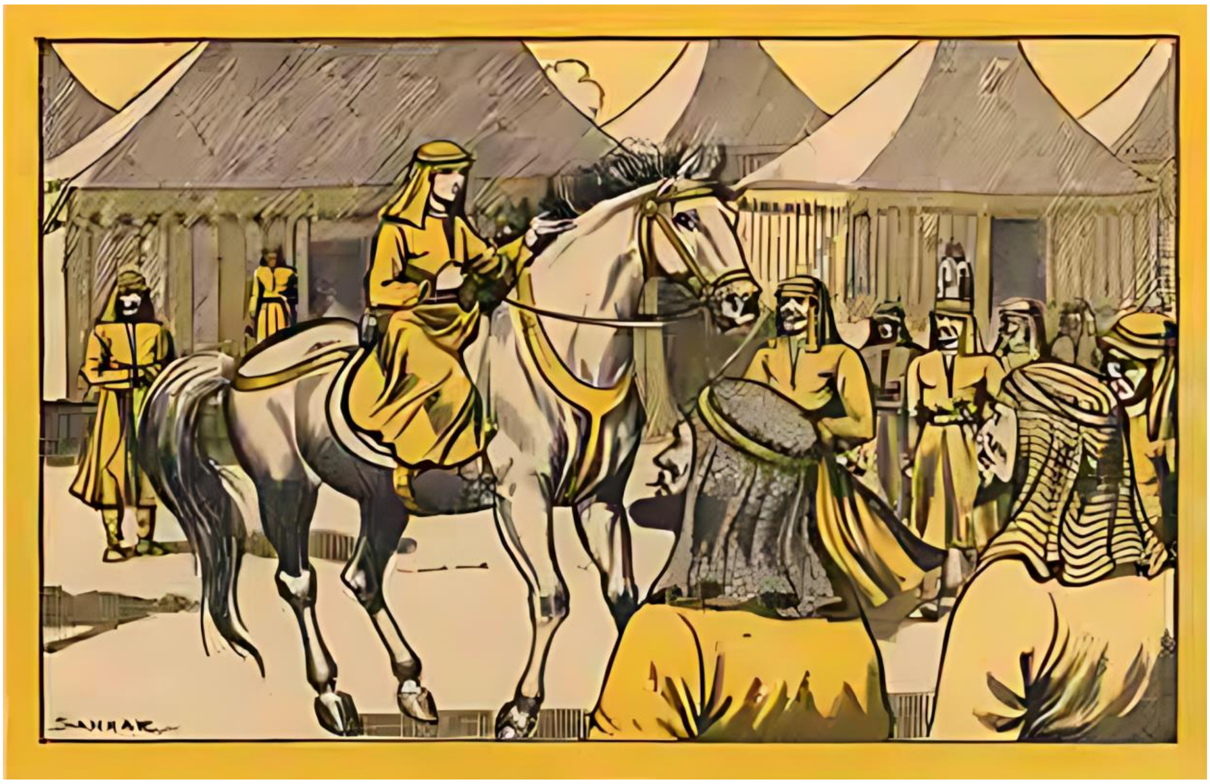

करें। अगर आप दीनारें नहीं देना चाहते हैं तो मैं चला जाऊँगा। पर आप अपने सरदार को, उस हालत में मरा जानिये। अगर आप मेरी बात मानते हैं, तो दस हज़ार दीनारों के देने की भी जरूरत नहीं। आपमें से दस हट्टे कट्टे आदमी मेरे साथ आइये। मैं आपके सरदार को दिखाऊँगा।"

यह सुन डाकुओं का सन्देह जाता रहा। उनमें से दस आदमी अपने घोड़े पर चढ़, दस हज़ार दीनारें लेकर, शम्स के साथ चल दिये। धूल और हवा के रूख से, वे दूरी पर जाते हुए, काफिले को जान लेते थे। वे काफिलों के रास्तों से अच्छी तरह वाकिफ थे। इसलिए थोड़ी देर में ही वे काफिले से जा मिले।

काफिले के पास पहुँचने से पहले शम्स ने डाकुओं से कहा-"तुम जरा धीमे धीमे आओ। मैं पहले काफिले के सरदार से जाकर कहता हूँ कि तुम दीनारें ला रहे हो, इसलिए तुम्हें पकड़ने की ज़रूरत नहीं है।" डाकू उसकी सलाह मान गए।

काफिले के सरदार से मिलकर शम्स ने सारी बात सच्ची सच्ची सुना दी। वह शम्स की अक्लमन्दी देखकर खुश हुआ। उसने डाकुओं को पास आने दिया।

डाकू दीनारों के साथ पकड़े गए। काफिले के सरदार ने उनको तलवार से कटवाने के लिए कहा और उसने यह भी फ़ैसला किया कि वे दस हजार दीनारें शम्स को मिलनी चाहिए। परन्तु शम्स ने कहा कि डाकुओं को नहीं मारें, क्यों कि बिना सरदार के वे उतने खतरनाक न थे। तब काफिले के सरदार ने डाकुओं से यह कसम खिलबाई कि वे आगे से डाका न डालेंगे और फिर उनको छोड़ दिया।

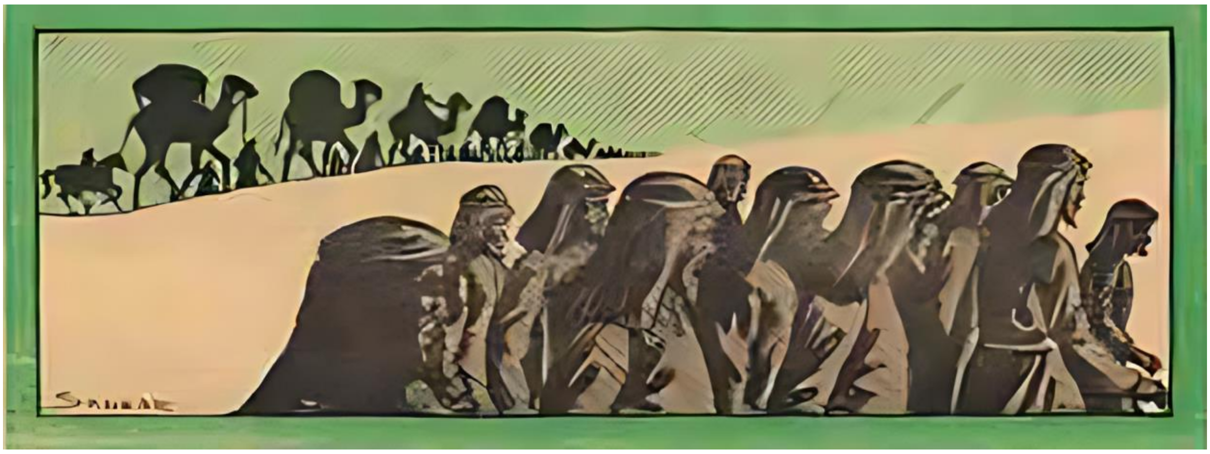

किसी जमाने में फिलोमिनस नाम का राजा रोम देश का राज्य किया करता था। उसकी एक सुन्दर लड़की थी। राजमहल का एक योद्धा उससे प्रेम किया करता था। एक बार उस योद्धा को राजकुमारी से एकान्त में बातचीत करने का मौका मिला। तब उसने हिम्मत करके, उसके सामने अपने प्रेम को व्यक्त किया।

राजकुमारी ने कहा-"क्योंकि तुमने अपने मन की बात कही है, इसलिए मैं भी अपने मन की बात तुम्हें बताये देती हूँ। यह सच है कि मैं भी तुम्हें बहुत दिनों से प्रेम कर रही हूँ।"

यह सुन योद्धा बहुत सन्तुष्ट हुआ। उसने राजकुमारी से कहा-"मैं कल परसों परदेश जा रहा हूँ। सात वर्ष बाद वापिस आऊँगा। इस बीच में, भले ही मेरी जान चली जाये, मैं किसी और से विवाह न करूँगा। तुम भी शपथ करो कि सात वर्ष तक मेरी प्रतीक्षा करोगी। अगर मैं सात वर्ष की अवधि के बाद न आया, तो समझना कि में मर गया हूँ और किसी और से तुम शादी कर लेना।"

राजकुमारी ने उसके हाथ पर हाथ रख यह शपथ ली। अगले दिन वह योद्धा परदेश के लिए रवाना हो गया। उसी दिन हङ्गरी देश के राजा ने रोम के राजा के पास ख़बर भिजवाई-"मैं तुम्हारी लड़की से विवाह करना चाहता हूँ।"

राजा ने अपनी लड़की पूछा-"बेटी! हङ्गरी देश का राजा तुमसे विवाह करना चाहता है। तुम्हारा क्या ख्याल है?"

"पिताजी! सात साल तक मैं कुँवारी ही रहना चाहती हूँ। अगर उसके

बाद भी मैंने शादी न की तो तब मैं अपना ख़याल आपको अवश्य बता दूँगी।" राजकुमारी ने कहा।

राजा ने अपनी लड़की के इस ख़याल के बारे में हङ्गरी राजा के पास खबर भिजवा दी। परन्तु हङ्गरी के राजा ने कहला भेजा-"अच्छा, तो मैं सात वर्ष बाद ही विवाह करने आऊँगा।"

सात वर्ष बीत गये। राजकुमारी योद्धा की वापसी की राह देख रही थी। अगर वह कल तक न आया तो हङ्गरी का राजा आकर उससे शादी कर लेगा। उसको उसके साथ शादी करनी ही होगी।

अवधि समाप्त होते ही हङ्गरी का राजा रोम के लिए निकल पड़ा। उसको रास्ते में एक योद्धा मिला। वह भी रोम नगर का था। वह रोम ही जा रहा था। उसको देखकर हङ्गरी का राजा बड़ा सन्तुष्ट हुआ। वे गप्पें लगाते लगाते रास्ता तय करते जाते थे। इतने में मूसलधार वर्षा होने लगी । हङ्गरी के राजा के कपड़े वर्षा में भीगकर बहुत खराब हो गये।

"महाराज! आपको अपने साथ अपना घर लाना चाहिए था।" योद्धा ने कहा।

"क्या हमारा पर कोई छोटा-मोटा है जो साथ ले आते? तुम बड़े नादान जान पड़ते हो।" राजा ने कहा।

थोड़ी दूर जाने के बाद एक नदी रास्ते में पड़ी। राजा ने अपने घोड़े को थप थपाकर पानी में कुदवाया। घोड़े के पैर गढ़े में जा पड़े। राजा डूबता डूबता बचा। योद्धा गढ़े से बचकर राजा के पीछे ही किनारे पर पहुँचा। उसने राजा से कहा-"आप साथ एक पुल जो ले आते!"

"तुम तो सचमुच पागल जान पड़ते हो। इस नदी को पार करने के लिए कोई

भला अपने साथ पुल लाता है?" हङ्गरी के राजा ने पूछा।

"बाबू! एक का मूर्ख होना दूसरे के लिए फायदेमन्द है।" योद्धा ने कहा।

थोड़ी दूर जाने के बाद हङ्गरी के राजा ने योद्धा से पूछा-"अरे माई इस समय वक्त क्या होगा?"

अगर पेट में भूख हो तो भोजन का समय है। क्या आप मेरे भोजन का कुछ हिस्सा लेंगे?" योद्धा ने पूछा।

"मुझे लेने में कोई एतराज नहीं है।" राजा ने योद्धा से कहा।

दोनों ने खूब खा-पीकर आराम किया। "बाबू! आपको माँ-बाप को साथ लाना चाहिए था।" योद्धा ने कहा।

"यह तो तुमने खूब कहा। मेरे पिताजी तो कभी के गुजर चुके हैं। मेरी माँ हमेशा चारपाई पकड़े रहती है। उनको कैसे साथ लाऊँ? लगता है तुम तो कतई बेबकूफ हो।" राजा ने कहा।

"सच कब तक छुपेगा? कभी न कभी आपको इसका पता लग ही जायेगा।" योद्धा ने कहा। वे फिर रोम पहुँचे।

"प्रभु! अब मुझे जाने की इजाजत दीजिए। आप शायद राज-पथ से जाएँगे। मैं पगडण्डी से ही चला जाऊँगा। सात साल पहले फन्दा डालकर गया था। देखना है कि वह किस हालत में है।" योद्धा ने कहा।

"अच्छा तो जाओ।" कहता कहता हङ्गरी का राजा आगे बढ़ गया। उसका रोम के राजा ने जोरदार स्वागत किया। नहा-धोकर, जब हङ्गरी का राजा, रोम के राजा के साथ मोजन कर रहा था तो उसने कहा-"मुझे मुझे रास्ते में एक योद्धा मिला। विचारा पगला था। जब बारिश में मेरे कपड़े भीग गये तो वह पूछता है-'साथ घर जो ले जाते।' यह कह राजा अट्टहास करने लगा।

"बारिश से उसने अपने को कैसे बचाया?" रोम के राजा ने पूछा।

"उसने अपने को दुपट्टे से ढाँप लिया था।" हङ्गरी के राजा ने कहा।

"तब क्या है? शायद यह कहने का उसका मतलब था कि आपको भी साथ दुपट्टा लाना चाहिये था। उसकी बात निरर्थक न थी।" रोम के राजा ने कहा।

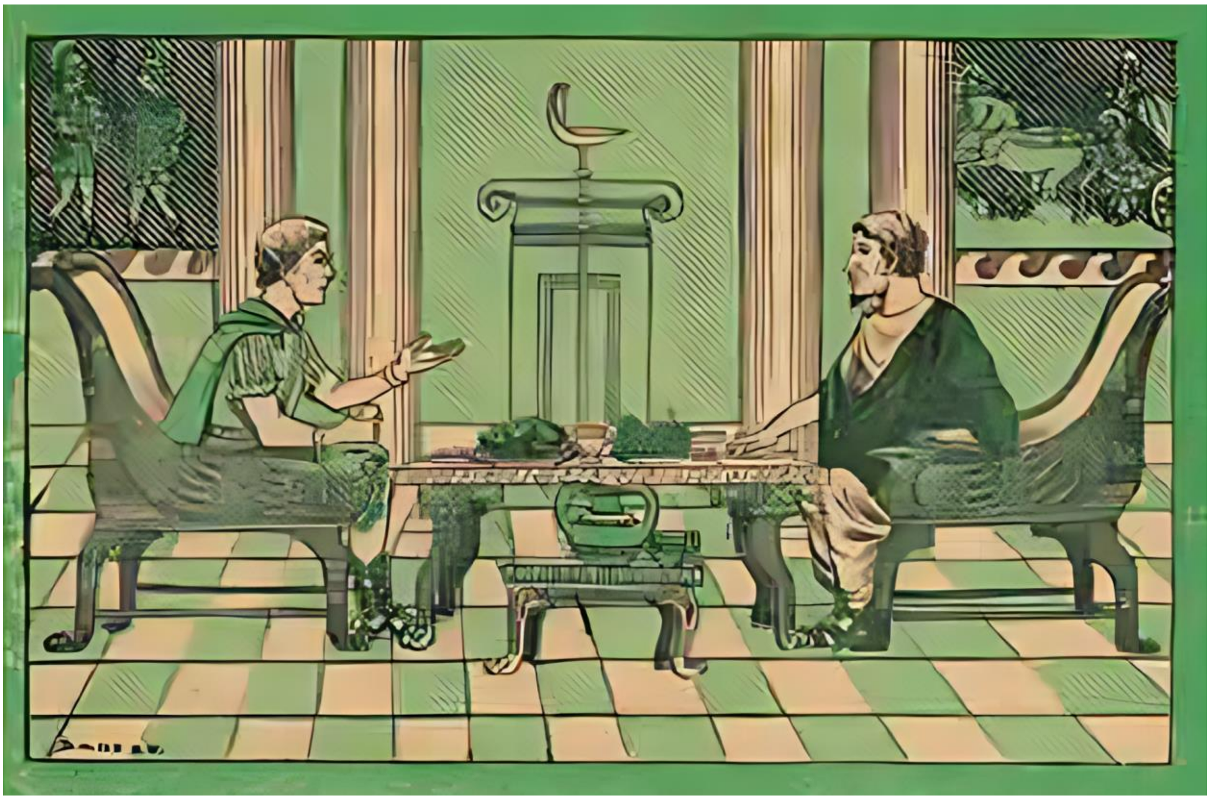

तब हङ्गरी के राजा ने वह घटना भी सुनाई--रास्ते में कैसे नदी आई, कैसे उसने घोड़े को कुदवाया, और कैसे वह डूबते डूबते बचा, और कैसे योद्धा ने उससे पूछा था कि साथ जो एक पुल ले आते।

"उस योद्धा का मतलब यह था कि आपको साथ नौकर-चाकर लाने चाहिये थे, ताकि वे आगे जाकर नदी की गहराई जान सकते।" रोम के राजा ने कहा।

"उसने मुझे भोजन के लिये निमन्त्रित किया और खाने-पीने के बाद उसने मुझसे कहा-आपको माँ-बाप साथ लाने चाहिये थे।"

उसका माँ-बाप से मतलब था, खाने-पीने की चीजें वह उन्हें स्वयं साथ ले आया था, और आप नहीं लाये थे।" रोम के राजा ने कहा।

"खैर, उसने जाते वक्त कहा कि सात साल पहले वह एक फन्दा डाल गया था, और उसको तुरन्त जाकर उसे देखना है। क्या इसका भी कोई मतलब है?" हङ्गरी देश के राजा ने पूछा।

"उसने क्या यह कहा था?" कहता कहता राजा जल्दी जल्दी उठा। 'सात साल' कहते ही, उसको लड़की की माँगी हुई सात वर्ष की अवधि याद हो आई। वह तुरन्त अन्तःपुर में गया। हङ्गरी का राजा भी उसके पीछे भागा। वह कुछ भी समझ न सका।

रोम के राजा का भय सच निकला। ढूँढने पर भी राजकुमारी का पता न लगा। उसको योद्धा साथ ले गया था।

"तुम जिससे शादी करने आये थे, उसको वह योद्धा पहले ही ले गया है। अब भी पता लगा कि नहीं कि तुममें से कौन मूर्ख है?" रोम के राजा ने पूछा।

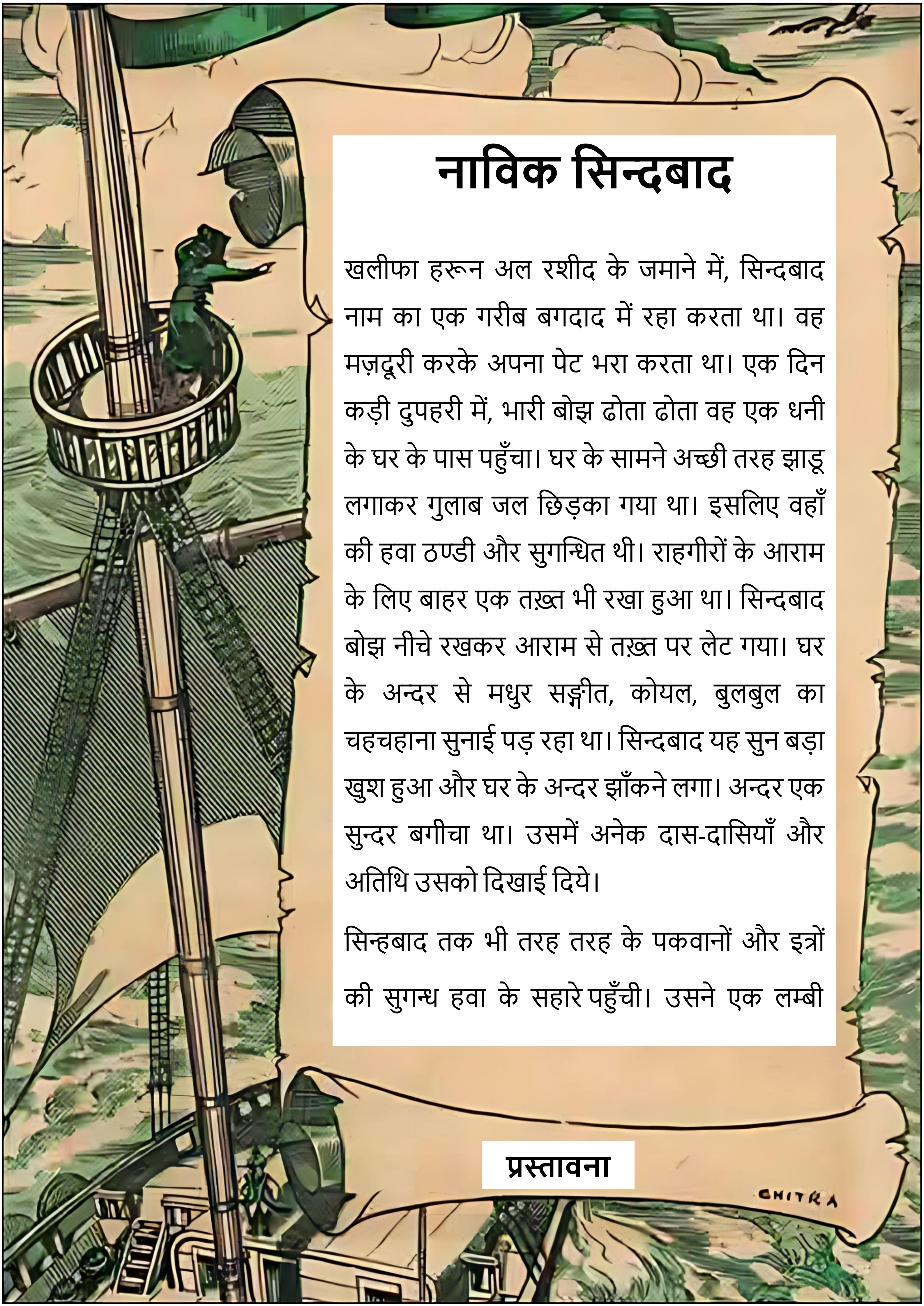

नाविक सिन्दबाद

खलीफा हरून अल रशीद के जमाने में, सिन्दबाद नाम का एक गरीब बगदाद में रहा करता था। वह मज़दूरी करके अपना पेट भरा करता था। एक दिन कड़ी दुपहरी में, भारी बोझ ढोता ढोता वह एक धनी के घर के पास पहुँचा। घर के सामने अच्छी तरह झाड़ू लगाकर गुलाब जल छिड़का गया था। इसलिए वहाँ की हवा ठण्डी और सुगन्धित थी। राहगीरों के आराम के लिए बाहर एक तख़्त भी रखा हुआ था। सिन्दबाद बोझ नीचे रखकर आराम से तख़्त पर लेट गया। घर के अन्दर से मधुर सङ्गीत, कोयल, बुलबुल का चहचहाना सुनाई पड़ रहा था। सिन्दबाद यह सुन बड़ा खुश हुआ और घर के अन्दर झाँकने लगा। अन्दर एक सुन्दर बगीचा था। उसमें अनेक दास-दासियाँ और अतिथि उसको दिखाई दिये।

सिन्हबाद तक भी तरह तरह के पकवानों और इत्रों की सुगन्ध हवा के सहारे पहुँची। उसने एक लम्बी

साँस लेकर कहा-"ओ अल्लाह! मुझ जैसे तुच्छ को कैसे मालूम कि किस पर तेरी कृपा दृष्टि पड़ती है। इस घर के मालिक को तूने सब कुछ दिया है अच्छा खाना, घर-सम्पति, भोग-विलास, आदि, और मुझ गरीब को कुछ भी न दिया।"

वह अल्लाह का ध्यान कर तुरन्त अपनी गरीबी पर कविता बनाकर गला फाड़ फाड़कर गाने लगा।

यह थोड़ी देर तक गाता रहा। जब वह अपना बोझ उठाकर जाने को था कि दरवाजे के पास आकर एक गुलाम ने उससे कहा-"मालिक तुम्हें अन्दर बुला रहे हैं। आओ, मेरे साथ आओ।" सिन्दबाद घबरा गया। उसने अन्दर न जाने के लिए कई बहाने बनाये। पर कोई फायदा न हुआ। बोझ मकान के पहरेदार के पास रख, वह डरता डरता गुलाम के साथ घर के अन्दर गया।

वह घर स्वर्ग के समान था। बड़े बड़े आदमियों की घर में खातिरदारी हो रही थी। जहाँ देखो वहाँ सुन्दर सुन्दर फूल रखे हुए थे। तरह तरह के इत्रा से घर महक रहा था। मेज पर बढ़िया बढ़िया पकवान परोसे गये थे।

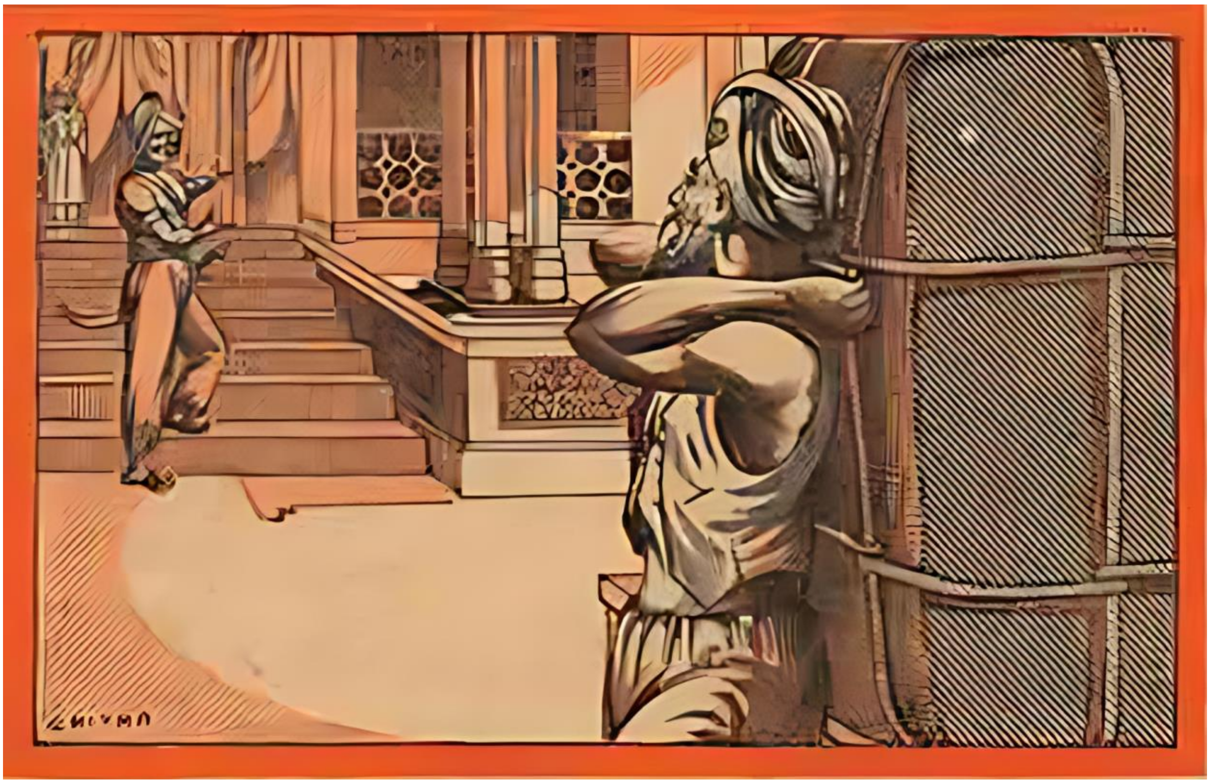

अतिथियों के बीच में सफेद दाढ़ीवाला एक बूढ़ा बैठा हुआ था। वह बहुत ही रौबीला जान पड़ता था।

बोझ ढोनेवाले सिन्दमाद को अपनी आँखों पर ही विश्वास न हुआ। "मैं सपना देख रहा हूँ कि स्वर्ग में हूँ" यह सोचता सोचता वह सबको झुक झुककर सलाम करने लगा। वह हाथ जोड़कर अदब से खड़ा हो गया। बूढ़े ने बड़े आदर के साथ उसको अपने पास बैठने के लिए कहा। उसके सामने भी भोजन रखा गया। खा-पीकर, जब तक उसने अपने हाथ न धो लिये, तब तक बूढ़े ने कुछ न पूछा। फिर उसने धीमे से कहा-"बेटा! अब तुम मेरे अतिथि हो। बिना किसी हिच-किचाहट के तुम यहाँ मजा करो। तुम्हारा नाम क्या है?"

"हुजूर, में थोड़ी मजदूरी के लिए बहुत सारा बोझ ढोता फिरता रहता हूँ। मुझे लोग सिन्दबाद कहकर पुकारते हैं।" कुली ने सविनय बताया।

बूढ़े ने हँसकर कहा-"जानते हो, मेरा नाम भी सिन्दबाद है। नाविक सिन्दबाद। मैंने तुम्हें इसलिए बुलाया है।"

ताकि तुम अपनी कविता फिर मेरे सामने सुना सको। कविता बहुत सुन्दर थी।" कुली सिन्दबाद ने शर्माते हुए कहा-"हुजूर, मैं गरीब हूँ। गँवार हूँ। बड़ी मेहनत करता हूँ। इसी कारण मैंने वैसी कविता गायी थी। मेरे दुख ने मुझ से ऐसी कविता बनवायी है। अगर गलती हो गयी हो तो जाप मुझे मेहरबानी करके माफ़ करें।"

"तुम्हें उन कविताओं के लिए शर्मिन्दा होने की कोई जरूरत नहीं है। तुम मेरे भाई जैसे हो। मैं कविता सुनकर बहुत खुश हुआ हूँ। उसमें तुमने अपने दर्द का बयान किया है। मैं उसे बार बार सुनना चाहता हूँ। फिर उसको एक बार गाकर सुनाओ।" नाविक सिन्दबाद ने कहा। कुली सिन्दबाद ने जोर जोर से गाकर अपनी वह कविता सुनायी।

तब बूढ़े ने कहा-"मेरी भी एक अजीब कहानी है। में तुम्हें सुनाता हूँ। सुनो। मैंने रईस होने के लिए बहुत तकलीफें झेली हैं। मेरी कहानी सुनकर तुम भी यह जान जाओगे कि मेरी जिन्दगी किस तरह गुजरी थी। मैंने कई कष्ट सहे। दिन-रात मेहनत की, खतरों का सामना किया, बदनसीबी देखी और सब इसलिए कि रुपया कमाकर बुढ़ापे में आराम से रह सकूँ। मैंने सात बार समुद्र यात्रा की। जब किसी को मैं अपनी यात्राओं का वृतान्त सुनाता हूँ तो वे हैरान हो जाते हैं। पर जो किस्मत में लिखा था, वह हुआ ही, और होकर रहेगा।"

बाद में नाविक सिन्दबाद, कुली सिन्दबाद और बाकी अतिथियों को अपने अनुभवों की कहानी यों सुनाने लगा।

(कहानी का प्रारम्भ अगले महीने पढ़िए)

मारवाड़ में रजसिंह नाम के राजा रहा करते थे। उनकी एक लड़की थी; नाम था मीरा।

वे बहुत सुन्दर और आकर्षक थीं। पहले जन्म के पुण्यों के कारण वे बचपन में ही परमात्मा की भक्ता बन गई। जब वे मिट्टी की खिलौनों से खेला करती थीं, तो सभी खिलौनों में उनको कृष्ण सलोने की सूरत दिखाई दिया करती और वे तब आनन्द में मग्न हो जाती।

ज्यों ज्यों वे उम्र में बड़ी होती गई, त्यों त्यों उनकी भक्ति भावना भी बढ़ने लगी। उनको सारा संसार आनन्द सागर-सा लगता, कृष्णमय मालूम होता था। भक्ति की तन्मयता में उनके मुख से अनायास सुन्दर गीत निकला करते। इन गीतों में अच्छे भाव तो होते ही थे, इसके साथ साथ कविता की अच्छी पुट भी होती थी।

मीरा बड़ी हुई। विवाह का समय आया। जब उन्हें मालूम हुआ कि माता-पिता उनके विवाह के लिए प्रयत्न कर रहे हैं; उनका खुश होना तो अलग, वे बड़ी दुःखी हुई। उन्होंने अपना सारा जीवन भगवद्भक्ति में गुजारना चाहा था। वे संसार-समुद्र में डुबकी लगाना नहीं चाहती थी।

उन्होंने अपनी माता के पास जाकर कहा-"माँ! मेरी बात सुनो। मनुष्य जन्म को सार्थक करने के लिए सिवाय भगवान की उपासना के कोई मार्ग नहीं है। दुःखमय संसार में डूबकर भगवान को भूल जाना अच्छा काम नहीं है। इसलिए मुझ पर कृपा करो। मेरी शादी न करो।"

यह सुन मीरा की माता हैरान हो गई। वह जानती थी कि उनकी लड़की भगवद्भक्ति में हमेशा मस्त रहती थी। भक्ति में कोई

कुमारी आशा भटनागर

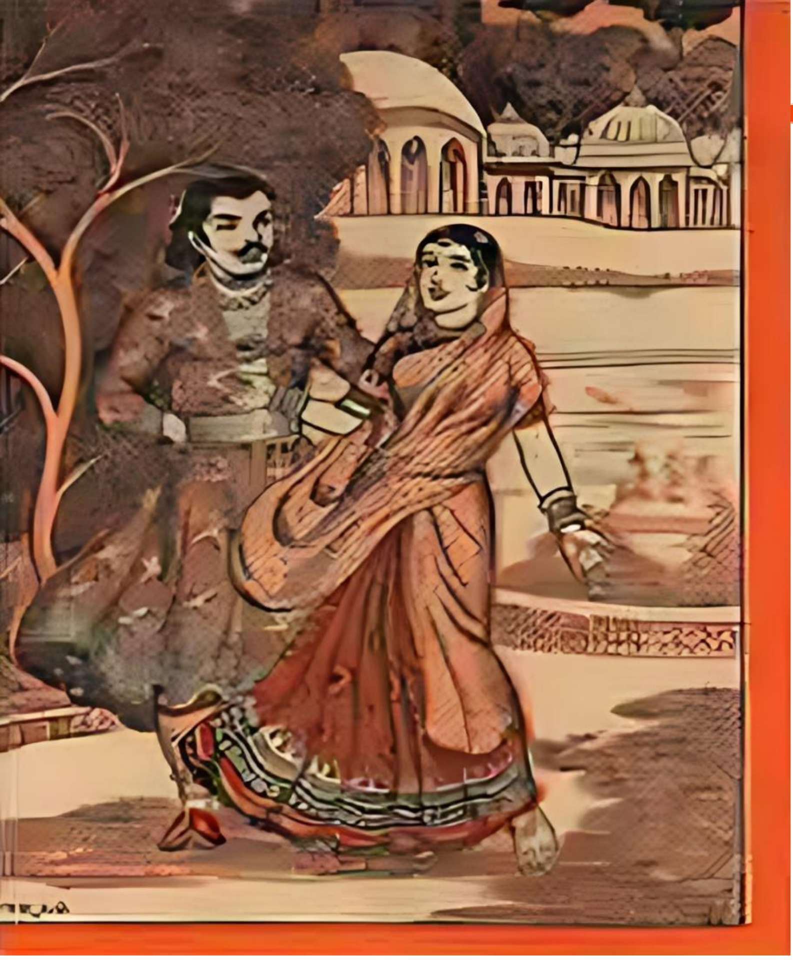

खराबी न थी, इसलिए उन्होंने मीरा को डोटा-डपटा भी न था। पर वह यह न जानती थी कि मीरा पर भक्ति का नशा इतनी अधिक मात्रा में चढ़ेगा।

"क्या कह रही हो, मीरा? तुम कहती हो कि शादी नहीं चाहिए। जानती हो शादी क्या चीज है। शादी का मामला माँ-बाप तय करते हैं। यह तुम्हारा फर्ज है कि तुम हमारी बात मानो।" उनकी माता ने मीरा को धमकाया।

मीरा कर ही क्या सकती थीं? वे शादी के लिए मान गई। वे जान गई कि उनके माँ बाप उन्हें न समझ पायेंगे। उन्होंने मन ही मन निश्चय किया कि विवाह हो या न हो, वे भगवद्भक्ति में ही अपना जीवन बितायेंगी। उन्होंने भगवान के प्रत्यक्ष इसकी शपथ भी की।

थोड़े दिनों बाद उनका विवाह हो गया। उनके पति मेवाड़ के राजा के पुत्र भोजराज थे। उन दिनों मारवाड़ की राजधानी चितौड़ थी। चित्तौड़, राजपूत राज्यों का सिरमोर समझा जाता था। ऐसे राज्य की, बिना जाने ही मीरा रानी हो गई थी।

राणा को कविता का शौक था। वे स्वयं कबिता किया करते थे। पति-पत्नी दोनों कई दिनों तक कविता में मस्त रहे। मीरा के दिन खुशी खुशी में गुजरते गये। परन्तु धीमे धीमे दोनों की कविता में काफी भेद दिखाई देने लगा। सिवाय भगवान की स्तुति के मीरा की कविता का और कोई विषय न होता था और उनके पति कीर्ति, विजय, इहलौकिक सुख के बारे में तुकबन्दी किया करते थे।

मीरा के व्यवहार में भी उनके पति को फर्क दिखाई देने लगा। वे धीमे धीमे अन्तःपुर के भोग-विलास से किनारा करने

लगीं। कीमती जेवर और पोशाकों को उन्होंने छोड़ दिया। मोटे मोटे गद्दे भी छोड़ दिये। मोटा कपड़ा पहनतीं और जमीन पर चटाई बिछाकर सोतीं। वे ठीक तरह खाती भी न थीं। अपनी सहेलियों और दासियों को अपने गीत सिखाती और अपने साथ उनको गाने को भी कहतीं।

इतने से भी उनको तसल्ली न थी। राज महल तो कुँए के बराबर होता है। संसार विशाल है। भगवान की महिमा गाकर इस भवसागर को पार करनेवाले कितने ही हैं। मीरा की इच्छा थी कि राजमहल से निकलकर उन सब को अपने गीत सुनायें और वे भी उनके गीत गायें।

एक दिन वे कृष्ण के मन्दिर में गयीं वे कृष्ण की मूर्ति के सामने इतनी तन्मय होकर गायीं और नाचीं कि बेहोश होकर गिर गयीं। जब वे फिर होश में आयी तो वे पूरी तरह बदल चुकी थीं। उन्हें यह अनुभव हुआ कि वे मानों भगवान का एक अंश स्वयं बन गयी थीं।

तब से वे रोज कृष्ण के मन्दिर में जाने लगीं। उनके मधुर गीतों को

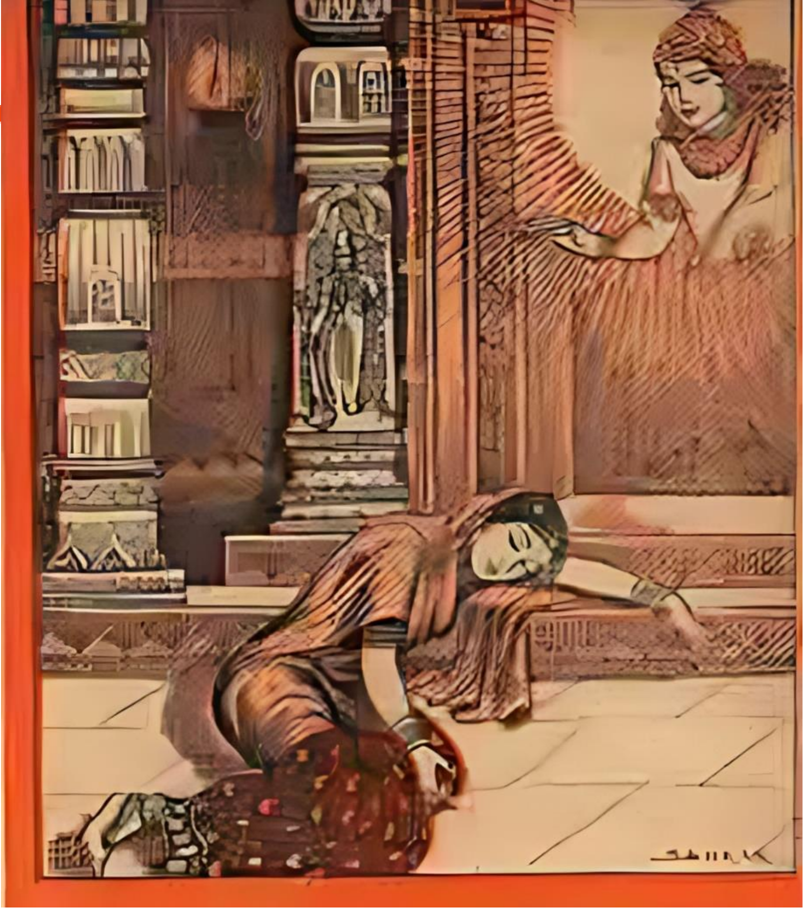

उनके मुँह से सुनने के लिए देश के चारों कोनों से भक्त आने लगे। वे मीरा के साथ कृष्ण भगवान के कीर्तन करने लगे। कई तो सब कुछ छोड़-छाड़कर भक्त बन गये।

मीरा की कीर्ति दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती गई। उनका यश दिल्ली के बादशाह अकबर तक भी पहुँचा। अकबर इतना उदारशील था कि हर किसी के बड़प्पन की वह प्रशंसा किया करता था। जब उसे मेवाड़ की रानी मीरा के गीतों के बारे में पता लगा तो उसने उनको स्वयं सुनना चाहा। अगर राजपूतों को मालूम होता कि वे मीरा के गीत सुनना चाहते हैं, तो

वे ख़्वाहम ख़्वाह जलने लगते। इसलिए अकबर ने इस सम्बन्ध में दरबारी गायक तानसेन की सलाह माँगी।

"अगर आप बैरागी का बेश भर लें, तो बिना किसी की अनुमति के आप स्वयं जाकर अपनी इच्छा पूरी कर सकते हैं।" तानसेन ने कहा। दोनों गेरुआ पहनकर मेवाड़ गये। कृष्ण मन्दिर के बाहर खड़े होकर उन्होंने मीरा के गीत सुने। मीरा के गीत सुनते सुनते अकबर तन्मय हो गया। अन्त में उसने मीरा के पाँव पकड़कर कहा-"माँ! मुझे मोक्ष का मार्ग दिखाओ।"

"बेटा! हमेशा भगवान का ध्यान करते हुए पापरहित जीवन व्यतीत करते रहो।" मीरा ने कहा।

अकबर ने गले में से एक मोती का हार निकालकर, मीरा के पाँव पर रखकर उनसे उसे स्वीकार करने की प्रार्थना की। बैरागी के पास इतना कीमती हार देख मीरा भौंचक्का हो गयीं। उन्होंने पूछा- "बेटा, तुम्हें यह कहाँ से मिला है? तुम तो तपस्वी मालूम होते हो।"

"माँ, जब में यमुना में स्नान कर रहा था तब मुझे यह हार मिला।

तपस्वी को इसकी क्या जरूरत? आप इसे ले लें।" अकबर ने कहा।

मीरा ने वह हार लेकर कृष्ण के गले में डाल दिया। राणा को तो पत्नी का रवैया बिल्कुल पसन्द नहीं था। उनका ख्याल था कि जो कुछ मीरा कर रही थी, वह मेवाड़ की महारानी को शोभा नहीं देती थी। तिस पर उनको मोती की माला के बारे में भी मालूम हो गया। उन्होंने माला मँगवाकर जाँच-पड़ताल की। उसकी कीमत कम से कम दस लाख रुपये की थी। इतना कीमती हार कौन लाकर दे सकता है? राणा के एक दरबारी ने कहा कि उसने अकबर बादशाह को वह हार खरीदते देखा था। राणा ने अपने भेदियों से भी मालूम किया कि उनकी पत्नी को वह हार अकबर बादशाह दे गये थे। वे बहुत शर्मिन्दा हुए। मीरा के कारण मेवाड़ की बदनामी हो रही थी। इसलिए राणा ने उनको तुरन्त मार डालने की आज्ञा दी।

पर उनको कौन मारता? बहुत सारे रुपये का लालच दिया गया, पर कोई भी उनको मारने के लिए तैयार न हुआ। मीरा की पवित्रता के मुकाबले में राणा की

आज्ञा किस काम की थी? राणा उनको मरवा न सके। निराश हो, उन्होंने उनको एक काली कोठरी में बन्द करवा दिया। मीरा इस पर भी दुःखी न हुई। काली कोठरी में भी, वे अपने आनन्द में मस्त थीं। गीत गा-गाकर समय काटती।

पर राणा की आँखों में मीरा का जीना ही खटक रहा था। उन्होंने उनके पास एक कटोरे में विष भिजवाया। भगवान का नाम लेकर मीरा ने वह विष पी भी लिया। विष उनका कुछ न बिगाड़ सका। एक टोकरे में सौंप रखकर, मीरा के पास उन्होंने यह कहकर भिजवाया कि उसमें चन्द्रहार है। टोकरी खोलते ही साँप ने फन उठाकर मीरा को काटा। मीरा ने निडर हो उस साँप को अपने गले में डाल लिया।

जब राणा को मालूम हुआ कि मीरा को मारने के उनके दोनों यत्न निष्फल हो गये हैं, तो उन्होंने अपनी पत्नी के पास खबर भिजवायी-"तुम आत्म हत्या कर लो। यह मेरी आज्ञा है।" मीरा इसके लिए मान गयीं और अपने पति को एक बार देखने की इच्छा प्रकट की। पर राणा न माने। "अच्छा तो मैं आत्म-हत्या कर लूँगी।" मीरा ने कहा। उनको काली कोठरी में से छोड़ दिया गया।

परन्तु दिन-दहाड़े आत्म-हत्या नहीं की जा सकती थी। हजारों आदमी नगर में ऐसे थे, जो उनको अपने प्राणों से भी अधिक मानते थे। इसलिए वे आधी रात को अकेली बाहर निकल गयीं। जाते जाते उनको रास्ते में एक नदी दिखाई दी। वे उसमें कूद पड़ीं। उस समय भी वे भगवान का ध्यान कर रही थीं।

नदी में डूबने के बाद उनको ऐसा लगा, जैसे उनके सामने कोई चीज चमक

रही हो। उनको लगा, कोई कान में कह रहा हो-"तू पति की आज्ञा पर आत्म-हत्या कर रही है। अब तेरा पुनर्जन्म हुआ है। तू जनता में जाकर भगवद्भक्ति का प्रचार कर।"

अब उन्होंने आँखें खोलकर देखा तो वे नदी के किनारे पड़ी हुई थी। परन्तु वह जगह वह न थी, जहाँ वे नदी में कूदी थीं। अन्धकार भी न था। सूर्य जोर से चमक रहा था। नदी में जो प्रकाशमान दृश्य उन्होंने देखा था, मीरा न भूल पायीं। वे उठ खड़ी हुई और अपने गीत गाती हुईं खेतों में निकल गई।

थोड़ी दूर जाने के बाद मीरा को कुछ चरवाहे दिखाई दिये। उनसे उन्होंने वृन्दावन का रास्ता पूछा। चरवाहों ने उनको पीने के लिये दूध दिया, उनके साथ जाकर थोड़ी दूर तक वृन्दावन का रास्ता भी दिखाया। गाँव गाँव वे अपने गीत गाती चलती जाती, उनके पीछे लोगों की भीड़ लग जाती, और वे भी उनके साथ भक्ति में तल्लीन हो जाते। कई तो घर बार छोड़कर उनके पीछे पीछे चलने लगे। कई सारे भक्तों को साथ लेकर मीरा वृन्दावन पहुँची।

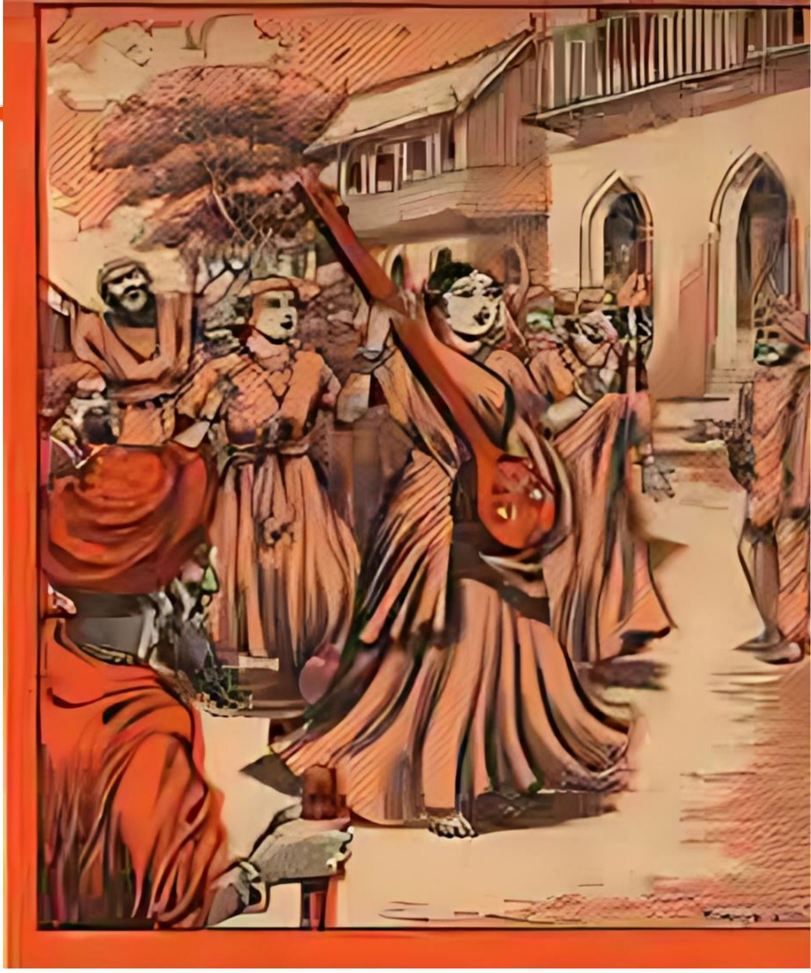

वृन्दावन में रूप गोसाई नाम का एक तपस्वी रहा करता था। उनको स्त्रियों और सोने से बहुत नफरत थी। वे कहा करते थे कि जो कोई इन दोनों को अपने पास रखेगा, वह मोक्ष का अधिकारी न होगा। रूप गोसाई के विषय में मीरा को भी मालूम हुआ। उन्होंने उनके पास यह सन्देश भेजा-"महाशय। वृन्दावन में श्री कृष्ण ही एक पुरुष हैं, बाकी सब गोपियाँ हैं। और आप पुरुष हैं। आपका यहाँ रहना अच्छा नहीं। इसलिये तुरन्त चले जाइये।" यह सुन रूप गोसाई

बहुत आनन्दित हुआ। उन्होंने मीरा को बुलवा भेजा। वे दोनों मिलकर एक दूसरे को गुरु मान उपदेश देने लगे। मीरा ने गीत गाना नहीं छोड़ा। उनके गीतों का प्रचलन सारे देश भर में हो गया। पहले पहल, चित्तौड़ में हर किसी को मीरा के गीत गुनगुनाता देख, राणा नाराज हुए, मगर बाद में पछताने लगे। उनका राज्य बहुत छोटा था, पर मीरा एक बड़े साम्राज्य की रानी थीं। उनके सामने उनकी क्या हस्ती थी?

चित्तौड़ से हजारों लोगों को मीरा के दर्शन के लिये वृन्दावन आता जाता देख, राणा भी मामूली पोशाक पहनकर अकेला वृन्दावन के लिये रवाना हुए। वृन्दावन पहुँचकर मीरा के निवासस्थान के सामने जाकर कहा-"मिक्षांदेहि"। मीरा ने कहा-"मैं स्वयं मिखारिन हूँ, सिवाय आशीर्वाद के मैं और कुछ नहीं दे सकती।"

"मैं तुम्हारी एक मदद चाहता हूँ।" राणा ने कहा।

"क्या मदद चाहते हो?" मीरा ने पूछा।

"मुझे क्षमा कर दो।" कहते हुए राणा ने अपनी पोशाक हटा दी।

अपने पति को देखकर मीरा बहुत प्रसन्न हुई। उनको पति पर लेशमात्र भी क्रोध न था। वे राणा के साथ चित्तौड़ वापिस चली गई। दे तब से वर्ष में छः महीने चित्तौड़ में और छः महीने वृन्दावन में रहती।

मीरा चार सौ वर्ष पहले जीवित थीं। पर उनके गीत अब भी जीवित हैं, वे सदा की भाँति आज अमर हैं और रहेंगे। उनको सुनकर और पढ़कर लाखों भक्त तन्मय हो चुके हैं और होते रहेंगे।

CHITRA